मराठी साहित्य का आधुनिक काल उपन्यास के संदर्भ में

निबंधवाचक - डॉ. वासुदेव सावंत,
मराठी विभाग, गोवा विश्वविद्यालय.

मराठी साहित्य का आधुनिक काल सन १८१८ से जब महाराष्ट्र में अंग्रेजी राज शुरू हुआ तबसे शुरू होता है। लेकिन आधुनिक या आधुनिकता यह संज्ञा केवल कालसापेक्ष, कालसीमित नहीं होती, यह संज्ञा मूल्यसापेक्षभी है। मानवी जीवनकी बदलती भौतिक स्थिति, बदलती जीवनदृष्टि और मूल्यदृष्टि को यह संज्ञा संकेत देती है। अंग्रेजी राजका यहाँ अपना सिर्फ राजनैतिक बदलाव नहीं था, भारतीय और पाश्चिमात्य इन संस्कृतियों के संपर्क (संबंध) का (acculturation)प्रारंभ था जो अगले डेढ़ सौ सालों तक चलता रहा। भारतीय संस्कृतिपर, भारतीय जीवन के विविध आयामोंपर अंग्रेजी राज का उसके द्वारा आये हुए पाश्चिमात्य विचार और संस्कृतिका गहरा प्रभाव रहा है। यूरोप में रिनेसन्स या पुनर्जागरण के बाद जिन जीवनमूल्यों के आधारपर आधुनिक योरोप का निर्माण हुआ उन मूल्यों का बीजारोपण और विकसन अंग्रेजी राज के कारण हमारी भूमि में भी हुआ। विशेषतः अंग्रजों की बदलती, नयी शिक्षानीति के कारण भारतीय मानसिकता इन नये विचारों से, मूल्यों से प्रभावित रही। इहवाद, व्यक्तिस्वातंत्र्य, विवेकबाद, rationalism विज्ञाननिष्ठा, स्वातंत्र्य, समता जैसे नये मूल्य और विचारोंने भारतीयों का जीवन के आकलनका दृष्टिकोणही world view बदल गया। मानवी जीवन का अंतिम साध्य अलौकिक माननेवाली पारम्परिक भारतीय जीवनदृष्टिसे विश्व को मानकेंद्रित और इहकेंद्रित माननेवाला यह पश्चिमी दृष्टिकोण अलग था। महाराष्ट्र में पेशवाराज के उत्तरार्ध में अवनत स्थितितक पहुँची हुई संस्कृति में इस नये दृष्टिकोण की, नये मूल्यों की एक तरह से आवश्यकतासी थी। इस लिए अनेक लोगोंने, विचारकोंने शुरू में अंग्रेजी राज का और उसके साथ आए हुए नये विचारोंका स्वागतही किया। अंग्रेजी राज के बाद महाराष्ट्र में सामाजिक-सांस्कृतिक सतह पर एक आमूलाग्र परिवर्तन आया। किसीभी भाषा का साहित्य देशकाल स्थिति और युगीन संस्कृतिसे संबद्ध होता है, इसी कारण अंग्रेजी राजके बाद धीरे धीरे मराठी साहित्य का भी रूप बदला।

प्राचीन। मध्ययुगीन काल में प्रायः धर्मकेंद्रित, आधात्म्य और भक्ति केन्द्रित रहे साहित्य में अब मानव के ऐहिक जीवन को ऐहिक समस्या को महत्त्व प्राप्त हुआ। प्राचीन कालमें हमेशा पद्यरूप में लिखे गये साहित्य की जगह आधुनिक कालमें गद्य विधा को महत्त्व प्राप्त हुआ। निबंध, उपन्यास, लघुनिबंध जैसी नयी वाङ्मय विधाएँ मराठीमें आयी उसके साथ काव्य, नाटक, कहानी जैसी पारंपारिक विधाओं को एक नया रूप भी आधुनिक काल में प्राप्त हुआ। स्कूलों-कॉलेजों में अंग्रेजी साहित्य का जो परिचय हुआ उसके कारण साहित्यविषयक दृष्टिमें परिवर्तन हुआ। रोमँटिसिझम, यथार्थवाद आदि पश्चिमी साहित्य की धाराओंका प्रभाव मराठी साहित्यपर भी रहा। अंग्रेजी संपर्कसे इस प्रकार आधुनिक (अर्वाचीन) मराठी साहित्य और भाषा का भी निर्माण हुआ। इस

आधुनिककालीन मराठी साहित्य में आजतक बहुतसारे बदलाव हुए हैं, अनेक धाराएँ, अनेक विध प्रवृत्तियाँ और प्रवाह निर्माण हुए हैं। उपन्यास और कहानी इन कथात्मक विधाओंमें भी यह अनेकविध प्रवृत्तियाँ और परिवर्तन देखे जा सकते हैं। इन सब प्रवृत्ति-प्रवाहों का विवेचन साद्यंत विवेचन यहाँ संभव नहीं है इसलिए संक्षेप में, सूत्ररूप में कुछ मुद्दों का निर्देश मैं करूँगा।

आधुनिककालीन मराठी साहित्य का इतिहास लिखते समय इतिहासकारोंने साहित्य-परिवर्तन के आधारपर कुछ कालखंडोमें विभाजन करके आधुनिक साहित्य का विचार किया है। यह कालखंड इस तरहसे माने गये हैं -

१. १८१८ से १८७४ तक : अव्वल इंग्रजी काल-
२. १८७४ से १९२० तक : आधुनिक साहित्य की मराठीमें प्रस्थापना
३. १९२० से १९४०-४५ : रविकिरन मंडलका काल और कहानी - उपन्यासमें फडके-खांडेकर युग.
४. १९४५ से १९६० : नवसाहित्य
५. १९६० के बाद - साठोत्तर साहित्य

इन विविध कालखंडों में कहानी और उपन्यास का स्वरूप क्या रहा संक्षेपमें देख सकते हैं। १८१८ में महाराष्ट्र में अंग्रेजी राज का प्रारंभ हुआ, लेकिन कोई भी साहित्य ऐसी ऐतिहासिक घटना के साथ तुरंत बदलता नहीं। आधुनिक मराठी साहित्य के बदलाव की संदर्भभूमि (पूर्वतैयारी) १८१८ से १८७४ के काल में तैयार हुई। आधुनिक साहित्य की आवश्यक जीवनदृष्टि इस कालमें तैयार हुई, वैसे मराठी भाषा का नया आधुनिक रूप और साहित्य की नयी दृष्टि धीरे धीरे विकसित हो गयी। इस कालमें स्वतंत्र साहित्यरचना की तुलना में भाषांतरित-अनुवादित लेखनही विपुल हुआ। मराठीमें आधुनिक कथात्मक साहित्य का प्रारंभ ऐसे अनुवादों से हुआ। सिंहासन बत्तीसी, हितोपदेश, पंचतंत्र, वेताळ पंचविशी आदि भारतीय ग्रंथों के साथसाथ अरेबियन नाईटस् (अरबी भाषेतील सुरस आणि चमत्कारिक गोष्टी कख्त्यारनामा, कहारदानी जैसे अरबी-फारसी और इसापनीती जैसे कथात्मक साहित्यका अनुवाद हुआ। कुमारों के लिए बोधकथा, नीतिकथाएँ लिखी गयी। उपन्यास लेखन की शुरूआत piligrims progress के अनुवाद 'यात्रिक क्रमण'से हुई। मराठी का पहला स्वतंत्र उपन्यास 'यमुनापर्यटन' बाबा पदमनजीने १८५७ में लिखा। आगे चलकर मराठी उपन्यासों की तीन-प्रमुख धाराओंका प्रारंभ करनेवाले प्रारंभिक तीन उपन्यास यमुनापर्यटन (सामाजिक) मुक्तामाला (अदभुतरम्य) मोचनगड (ऐतिहासिक) १८७४ तक के इसी कालमें लिखे गए। उपन्यासोंकी आलोचना (नावल आणि नाटक) भी इसी काल में लिखे गए। विशेषतः केवल रंजनहेतु लिखे गये मुक्तामाला, मंजुघोषा जैसे पलायनवादी अदभुतरम्य उपन्यासोंपर शुरू के इस आलोचना में व्यंग्य कसा गया था। पारतंत्र्य कालमें अपनी अस्मिता का शोध लेने हेतु स्वाभिमान और आत्मगौरवकी भावनासें अपने इतिहास को देखनेकी प्रेरणा स्वाभाविक रूपसे निर्माण होती है। 'मो चनगड' जैसे ऐतिहासिक उपन्यास इसी प्रेरणासे निर्माण हुए। इतिहास का नाममात्र आधार लेकर अधिकतर कल्पानाविकास के सहारेही 'मोचनगड' और अन्य ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गये। इन उपन्यासों का स्वरूपही प्रायः रंजनपर था। आगे चलकर नाथमाधव, वि. वा. हडप जैसे उपन्यासकारोंनें कादंबरी रुप स्वराज्यमाला', 'कादंबरीमय पेशवाई' आदि शीर्षकों के अंतर्गत ऐतिहासिक रंजक उपन्यास धारावाहिक रूप में लिखकर सामान्य पाठकों का भरपूर मनोरंजन किया।

आत्मगौरव के साथ साथ दूसरी ओर आत्मपरीक्षण की प्रेरणाभी इसी पारतंत्र्य कालमें निर्माण हुई। आंग्ल संस्कृति के संपर्क में व्यक्तिस्वातंत्र्य, समता, विवेकवाद आदि मूल्यों से प्रभावित शिक्षित वर्ग अपने समाज और रूढ़ि-परंपराओंको इस आत्मपरीक्षा की दृष्टि से देखने लगा और समाज में

परिवर्तन की, सुधारकी आवश्यकता महसूस करने लगा। समाज के हर व्यक्ति का ऐहिक विकास होना चाहिए, व्यक्तिविकासको प्रतिकूल परंपरा और समाजमूल्य बदलने चाहिए, यह सुधारवादी विचारही साहित्य के विशेषतः उपन्यास के निर्माण की एक मुख्य प्रेरणा रही। 'यमुनापर्यटन' मराठीका पहला माना जानेवाला उपन्यास इसी परिवर्तनवादी प्रेरणासे लिखा गया और सामाजिक यथार्थ का अंकन करनेवाली उपन्यास-परंपरा का प्रारंभ मराठीमें इसी उपन्यास से हुआ।

१८७४ से १९२० तक का काल मराठी साहित्यके आधुनिकी करण की दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण काल है। १८७४ पूर्व काल में डाली गयी बुनियादपर आधुनिक मराठी साहित्य की एक बुलंद इमारत इस कालमें खड़ी हुयी। इस इमारत के रचनेवाले अनेक महत्त्वपूर्ण लेखक और साहित्य कला की दृष्टिसें ऊँचे दर्जे के कृतियों का निर्माण इस कालमें हुआ। उपन्यास विधा में सामाजिक यथार्थवादी और सुधारवादी उपन्यासों की धारा इस कालमें सबसे प्रबल रही। इस धाराका निर्माण करनेवाले ह. ना. आपटे इस कालके युगकर्ता उपन्यासकार रहे। हिन्दी उपन्यासोंमें जो स्थान प्रेमचंदजीका या बंगालमें शरतचंद्रजी का है वही स्थान मराठी उपन्यासों में ह. ना. तथा हरिभाऊ आपटेजीका है। साहित्यकारके नाते उनकी दृष्टि उद्बोधनवादी और समाज-परिवर्तनवादी थी और समकालीन यथार्थ का उत्कृष्ट प्रभावी आविष्करण उन्होंने 'गणपतराव' पण लक्षात कोण घेतो', 'मी' 'यशवंतराव खरे' आदि महत्त्वपूर्ण उपन्यासोंद्वारा किया। समाजव्यवस्था की बंधनों में बाँधी गयी हिन्दू स्त्री के प्रति उनका असीम सहानुभाव उपन्यासों में व्यक्त हुआ है। उनका सर्वश्रेष्ठ उपन्यास 'पण लक्ष्यात कोण घेतो' यमुनापर्यटन की तरह ही स्त्री केंद्रित और स्त्रीकी स्थिति-परिवर्तन का समर्थन करनेवाला है। यथार्थवाद को अपनाते हुए उपन्यास जैसी आधुनिक विधाकी कथा संरचना, पात्र चित्रण, कथ्यशैली की दृष्टिसे एक सशक्त रूप ह. ना. आपटेजीने प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने उपन्यासोंसे अनेक लेखक-उपन्यासकारोंको प्रभावित किया। हरिभाऊंद्वारा निर्माण सामाजिक उपन्यास की इस धारामें वामन मल्हार जोशी, श्रीधर व्यंकटेश केतकर, नारायण हरी आपटे, विभावरी शिरूरकर, मामा वरेरकर आदि उपन्यासकारों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। ह. ना. आपटे की उपन्यासोंकी तरह इन उपन्यास कारोंके उपन्यास भी स्त्रीसमस्याप्रधान या स्त्रीविमर्शप्रधान थे। इन उपन्यासों में रेखांकित स्त्रीपात्र सामाजिक बंधनों और दुखों को चुपचाप सहनेवाले नहीं है, व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह करनेवाले भी है। वा. म. जोशी के उपन्यासमें रागिणी और उत्तरा, केतकरजीके उपन्यास में कालिंदी (ब्राह्मणकन्या) शिरूरकर के उपन्यास में अचला (हिंदोळयावर) मामा वरेरकर के उपन्यासों में गोदू गोखले या विधवाकुमारी ये सभी विद्रोही नायिकाएँ हैं। इन उपन्यासकारोंमें श्री. व्यं. केतकर और विभावरी शिरूरकर इन दोनों का सामाजिक यथार्थ का आकलन अन्य उपन्यासकारों से कुछ अलगसा प्रतीत होता है। केवल शिक्षित होनेसे स्त्री की समस्या का समाधान नहीं होता। बल्कि शिक्षित, उच्चशिक्षित होनेसेही स्त्री के सामने कुछ नयी समस्याएँ समाजमें उभरकर खड़ी होती हैं इस यथार्थ को ये दोनों उपन्यासकार अच्छी तरह से जानते थे। केतकरजीकी दृष्टि एक समाजशास्त्री की दृष्टि थी तो विभावरी शिरूरकर की यथार्थ का आकलन करनेवाली दृष्टि एक स्त्री की दृष्टि थी। इसी कारण दोनों के उपन्यासमें सामाजिक यथार्थ का आविष्करण अन्य के उपन्यासों से अलग प्रकारसे हुआ और दोनों मराठी के महत्त्वपूर्ण सामाजिक उपन्यासकार साबित हुए।

१९२० के बाद (ह. ना. आपटे की मृत्यु के बाद) सामाजिक यथार्थवादी उपन्यास की धारा यद्यपि किसी न किसी लेखकद्वारा आगे चलती रही लेकिन १९२० के बाद मराठी उपन्यास में एक

महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आया। १९२० के बाद का यह काल मराठी साहित्य में-विशेषतः मराठी उपन्यास के क्षेत्र में फडके-खांडेकर युग के रूप में जाना जाता है। ना. सी. फडके, वि. स. खांडेकर और ग. त्र्यं. माडखोलकर इस कालके अग्रणी उपन्यासकार रहे। कथ्य और शिल्प (आशय-संरचना) की दृष्टि से मराठी उपन्यास को एक नया रूप देकर अपनी उपन्यास शैलीसे इस काल को प्रभावित करनेका महत्त्वपूर्ण कार्य ना. सी. फडकेने किया। ना. सी. फडके कलावादी arts for the arts sake माननेवाले साहित्यकार थे। साहित्य का प्रयोजन पाठकों को यथार्थ की परेशानियोंसे हटाकर आनंद देता है ऐसा उनका विश्वास था। अतः उनके उपन्यास यथार्थवादी होने के बजाय पाठकोंका स्वप्नरंजन करनेवाले थे। उनके सभी उपन्यासों का प्रमुख कथासूत्र the boy meets the girl यही रहता था। मनोरंजक (रंजनप्रधान) उपन्यास का एक विशिष्ट रचनातंत्र उन्होंने विकसित किया। वि. स. खांडेकर जीवनवादी होते हुए भी रंजनात्मक तंत्रसे प्रभावित रहे। प्रादेशिक, औपचारिक यथार्थ का चित्रण. गांव की ओर जानेवाले नायक-खांडेकर, वरेरकर प्रादेशिक उपन्यास-साई, पाणकळा, आदिवासी, किसानों का जीवन-जंगलातीत आधुनिक यथार्थ की पौराणिक मिथक के द्वारा आविष्कृत करनेवाला उपन्यास 'ययाति' खांडेकरजीका एक सफलतम उपन्यास रहा है।

१९३० के आसपास मराठी साहित्य गांधीवादी और कुछ हदतक मार्क्सवादी विचारोंसे भी प्रभावित हुआ। इस प्रभाव के परिणामस्वरूप मराठी उपन्यासों में आँचलिक (प्रादेशिक) तथा गाँव के यथार्थ का चित्रण होने लगा। ग्रामसुधार हेतु शहर छोड़कर गाँव की ओर आनेवाले नायक वि. स. खांडेकर, भा. वि. वरेरकर जैसे लेखकों के उपन्यासों में दिखायी देने लगे। आँचलिक (मराठी में प्रादेशिक) उपन्यास नामसे जानेवाली मराठी उपन्यासोंकी एक स्वतंत्र धारा इसी समय शूरू हुई। र. वा. दिघेद्वारा लिखे गये 'सराई' और 'पाणकळा' इन दो उपन्यासोंने इस नयी धारा के प्रारंभिक उपन्यास के रूप में अपनी एक अलग पहचान स्थापित की। आँचलिक उपन्यास और कथा साहित्य अनेक लेखकों द्वारा लिखा गया किंतु यथार्थवाद की अपेक्षा वह ज्यादातर रोमँटिक दृष्टिसे ही लिखा गया। लेकिन 'जंगलातील छाया', 'वाडगीण' जैसे कुछ उपन्यास किसान और आदिवासियों के शोषण को भी यथार्थरुप में अंकित करनेमें सफल रहे।

१९४० के बाद मराठी साहित्यमें एक और परिवर्तन आया। इस परिवर्तन को 'नया साहित्य' नामसे संज्ञापित किया गया। यह बदलाव विशेषरूपसे काव्य और कहानी की विधा में हुआ। नवकाव्य (नई कविता) और नवकथा (नई कहानी) का मराठी में प्रारंभ हुआ। प्रबोधन कालीन आधुनिक जीवनदृष्टिसे एक अलग आधुनिकतावाद (modernism) से प्रेरित दृष्टिकोण इस नये साहित्य के निर्माण के पीछे था। लेकिन काव्य और कहानी में आये इस आधुनिकतासे, नयेपनसे मराठी उपन्यास अस्पर्श रहा। मराठी उपन्यास का आशय-शिल्प की दृष्टिसे जो रूप ना. सी. फडके जीने विकसित किया था उसके प्रभावमेंही मराठी उपन्यासोंकी मध्यवर्ती धारा मंडराती है। इसी कारण मराठी उपन्यास-विधामें धीरे धीरे आवर्तित्व आता रहा। दूसरी और १९४० के बाद मराठी आलोचकोंने भी उपन्यास विधासे कहानी को अधिक महत्त्व देना शुरू किया। परिणामतः पचासके दशक में अपनी चैतन्यपूर्णता गँवाते मराठी उपन्यासमें एक गतिरोध पैदा हुआ। विशिष्ट रचनातंत्र परही अधिक निर्भर रहता हुआ मराठी उपन्यास जीवनयथार्थ से भी विमुख होता गया। इन रूढ तंत्रसंकेतों कों नकारते हुए यथार्थवादी चित्रण का प्रयास इस दशक के 'बनगरवाडी' (व्यंकटेश माडगूलकर), हिंदोळ्यावर बळी (विभावरी शिरूडकर), श्यामची आई (साने गुरूजी) जैसे कुछ गिने-चुने उपन्यासोंने किया किन्तु फडके-खांडेकर युग के आलोचकोंने इन कृतियों को

दुर्लक्षितही किया।

मराठी उपन्यास में आया यह गतिरोध १९६० के बाद खत्म हुआ और पचासके दशक में कुण्ठित मराठी उपन्यास की धारा अधिक गतिमान रूपमें बहने लगी। साठके बाद पूरे मराठी साहित्यमें ही एक मूलगामी परिवर्तन आया। इस परिवर्तन के कारणही १९६० साल के बाद निर्माण हुए साहित्य को 'साठोत्तर साहित्य' के विशिष्ट नामसें जाना जाता है। साठ के बाद हुए इस परिवर्तन की प्रमुख विशेषता यह थी कि अबतक केवल सफेदपोश मध्यवर्ग तक सीमित रहा आधुनिक मराठी साहित्य अपनी सीमाएँ लांघकर समाजके विविध स्तरोंतक, गाँवों-कस्बोंतक फैलकर मराठी साहित्य की सामाजिक, सांस्कृतिक, कक्षाएँ विस्तृत हुईं। आशय और शिल्प के बारे में प्रस्थापित संकेतों को तोड़कर मराठी साहित्य विविध अंगोंसे नया रूप लेता गया। 'लघुपत्रिका आंदोलन', दलित साहित्य, ग्रामीण साहित्य जैसे साहित्यिक आंदोलन १९६० के बाद जो निर्माण हुए वे प्रायः प्रस्थापित साहित्यधारा और विचारोंसे विद्रोह करनेवालेही थे।

इस बदलते माहौल में मराठी उपन्यास की धारा फिरसे सशक्त बनती चली गई। कथा की तुलनामें उपन्यास विधा को फिरसे महत्त्व प्राप्त हुआ। चालीस के दशक में जिस नयेपनसे कहानी और काव्य की अपेक्षा उपन्यास अस्पर्श रहा था उस नयेपन को आविष्कृत करते हुए साठोत्तर मराठी उपन्यास यथार्थ का सूक्ष्म और विविधांगी आकलन प्रस्तुत करनेमें सफल रहा। यथार्थ से अपना अटूट संबंध जोड़नेवाली साठोत्तर मराठी उपन्यास की इस धाराका आलोचकोंने 'नव कादंबरी' (नया उपन्यास) नामसे विचार किया है। इस नये उपन्यासने एक ओर रूढ़ रीतिप्रधान संकेतोंसे हटकर मानवी जीवनके संदर्भ में एक नया मूल्य विचार प्रस्तुत किया है। उपन्यास की इस नयी धाराका प्रवर्तन करनेमें अन्य कुछ उपन्यासों के साथ भालचंद्र नेमाडे द्वारा लिखे गए 'कोसला' उपन्यास का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। नेमाडेजी साथ साथ भाऊ पाध्ये (डोंबाऱ्याचा खेळ, बॅ. अनिरूद्ध धोपेश्वरकर, वासुनाका, राडा इ.) उध्दव शेळके (धग), मनोहर तल्हार (माणूस) ए. वि. जोशी (काळोखाचे अंग) किरण नगरकर (सात सक्कं त्रेचाळीस), दिनानाथ मनोहर (रोबो) प्रभाकर पेंढारकर (अरे संसार संसार), कमल देसाई (रात्रंदिन आम्हा...) सुभाष भेंडे (अंधारवाटा), श्याम मनोहर (कळ) आदि लेखकोंने मराठी उपन्यासकी इस नयी धाराको सशक्त किया है। समकालीन उपन्यासकारोंमें रंगनाथ पठारे, राजन गवस, सदानंद देशमुख आदि नामभी महत्त्वपूर्ण हैं।

१९६० के बाद मराठी साहित्य में ग्रामीण साहित्य का जो आंदोलन हुआ उस आंदोलन के परिणामस्वरूप साठोत्तरी उपन्यास की एक धाराका 'ग्रामीण उपन्यास' के नामसे आलोचकोंने विचार किया है। गोताक्का (आनंद यादव), पाचोळा (रा. रं. बोराडे), बारोमास (सदानंद देशमुख) आदि उपन्यास इस धारा के महत्त्वपूर्ण उपन्यास हैं। साठोत्तर कालमें मराठी में दलित साहित्य का निर्माण हुआ। दलित साहित्य ने मुख्यतः काव्य, आत्मकथा और कहानी के रूपमें अपनी अलग पहचान मराठी में बनायी है लेकिन दलित संवेदनशीलता को अभिव्यक्त करनेवाले उपन्यास मराठीमें बहुत कम लिखे गये हैं।

मराठी उपन्यास के बारेमें संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि आधुनिक कालमेंही उपजा मराठी उपन्यास का वृक्ष आज अनेक शाखा-फूलों से भरा हुआ है।

❖ ❖ ❖